Sanskritik aur Samajik Anusandhan
www.shodhjournal.com
ISSN: 2582-5852; Impact Factor: RJIF 5.44
Received: 11-10-2020; Accepted: 26-10-2020; Published: 14-11-2020
Volume 1; Issue 2; 2020; Page No. 40-44

विभिन्न कविता आंदोलनों की अनिवार्यता और अवधारणात्मकता

ऋषिकेश सिंह
पीएच. डी. (हिंदी), जामिया मिल्लिया इस्लामिया, ओखला, दिल्ली, भारत

प्रस्तावना

हिंदी साहित्येतिहास के आरंभिक 750 वर्षों का इतिहास प्रायः कविता का ही इतिहास है। जिसे आदिकाल, भक्तिकाल, व रीतिकाल के रूप में बांटकर देखा जाता है, परंतु इस दौर की काव्य प्रवृत्तियां साहित्यिक युगों का निर्माण करती हैं न कि आंदोलनों का, क्योंकि इस काल की कविताओं का सम्बन्ध युगीन परिस्थितियों की संप्रेषणीयता में अधिक रहा है विचारधारा के अभिव्यक्ति की यहाँ अनुपस्थिति है, इसीलिए ये काल का निर्धारण अधिक करती हैं। हालांकि इसके अपवाद के रूप में भक्तिकालीन काव्य को देखा जा सकता है,परंतु पूर्ण रूप से आंदोलनों को केंद्र में रखकर काव्य निर्माण का श्रेय आधुनिककाल को ही जाता है। यहाँ यह भी ध्यान रखने योग्य है कि विचारधारा को केंद्र में रखने वाले आंदोलन का कालिक स्वरूप सीमित होता है और वह युग की सीमा में समाहित हो जाता है, इसी कारण एक युग में कई आंदोलन हो सकते हैं किंतु एक आंदोलन में कई युग नहीं।

आधुनिक काल में भारतेंदु, द्विवेद्वी, छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नई कविता, अकविता, तथा समकालीन कविता जैसे काव्यान्दोलनों का उभार हुआ जिसे स्वतंत्रता पूर्व और पश्यात दो भागों में भी बाँट सकते हैं। इन काव्यान्दोलनों के उद्भव में सबसे प्रमुख भूमिका नवजागरण एवं आधुनिकता के विचारधारा की उत्पत्ति का है। औद्यौगिक क्रांति और पाश्चात्य ज्ञान-विज्ञान के परिचय से 19वीं शताब्दी में भारत में नवजागरण की लहर आई जिससे भारत के प्रत्येक क्षेत्र में बुद्धिवाद, मानवतावाद, व्यक्तिवाद, लोकतंत्र, समानता, स्वतंत्रता, न्याय जैसे मूल्यों को महत्त्व दिया जाने लगा, जो रीतिकालीन राज्याश्रय और रीतिवादी मानसिकता से बिल्कुल विपरीत था। डॉ. नगेन्द्र के शब्दों में कहें तो "आधुनिक काल अपने ज्ञान-विज्ञान और प्रविधियों के कारण मध्यकाल से अलग हुआ। यह काल औद्योगीकरण, नगरीकरण, और बौद्धिकता से सम्बद्ध है, जिससे नवीन आशाएं उभरी और भविष्य का नया स्वप्न देखा जाने लगा।" [1] परंतु यह दौर भारत के लिए औपनिविशेविक भी था अर्थात एक तरफ तो स्वतंत्रता आंदोलन का चरण दर चरण विकास हो रहा था वहीं दूसरी ओर इसके समानांतर नवजागरणकालीन मूल्य विकसित हो रहे थे इनके सांक्रमणिक समन्वय में ही हिंदी काव्यांदोलनों का विकास हुआ है, और इसी की पृष्ठभूमि में ही इसके अनिवार्यता और अवधारणात्मकता को समझ जा सकता है।

इन काव्यान्दोलनों में सर्वप्रथम भारतेंदु युग है जिसके प्रणेता भरतेंदु हरिश्चन्द्र स्वयं हैं। 1850-1900ई. का यह दौर कंपनी शासन के अंत, ब्रिटिश सरकार द्वारा शासन की शुरुआत के रूप में देखा जाता है, अतः इस काल की कविता की अनिवार्यता के केंद्र में उपरोक्त नवजागरणकालीन औपनिवेशिक परिस्थितियां ही हैं परंतु अवधारणा के रूप में इस युग का साहित्य अंतर्विरोधों का ही साहित्य है जैसे- राजभक्ति बनाम राष्ट्रभक्ति, राजभक्ति बनाम राजविरोध, ब्रज भाषा बनाम

खडी बोली आदि। रामविलास शर्मा के शब्दों में कहें तो " अंग्रजों ने भारतीयों को राजभक्ति सिखाई, उनके अंदर फुट की आग सुलगाई.....एक ऐसे आदमी की जरूरत थी जो अंग्रेजी शासकों और उनके मुसाहिबों की झूठी लफ्फाजी का पर्दाफाश करके उनकी असलियत बयां कर दे, जो जनता के उभरते हुए असन्तोष को प्रकट करे और जिन्हें अंग्रेजी राज्य से बहुत बड़ी आशाएं थीं उनकी आँखे खोल दे।" [2] इसके उपरांत काव्यान्दोलन का अगला चरण 1900-1920ई. का है जिसे द्विवेद्वी युग के रूप में जाना जाता है, इस युग में जहाँ एक तरफ स्वदेशी आंदोलन, असहयोग आंदोलन से पूरे राष्ट्र में स्वाधीनता की चेतना की एक लहर आई जिससे सांस्कृतिक पुनरूत्थान की प्रकिया को बल मिला वहीं नवजागरणकालीन मूल्यों से एक लोकोन्मुखी दृष्टि पनपी और साथ ही महावीर प्रसाद द्विवेद्वी के भाषाई द्वैत को समाप्त करने में भाषा के परिमार्जन और परिष्करण के साथ विषयों के वैविध्य पर जोर देने जैसे प्रयासों ने कविता के स्वरूप को बदला लोगों ने विचार करना शुरू किया कि "हम कौन थे क्या हो गए और क्या होंगे अभी/ आओ मिलकर विचारें ये समस्याएं सभी।" गणपति चंद्र गुप्त ने उचित ही कहा है "काव्यपरम्पराओं की दृष्टि से यह युग पूर्ववर्ती युग से अविभाज्य है, पूर्ववर्ती युग की ही परंपराओं एवं प्रवृत्तियों का विकास इस युग में हुआ। परिवर्तन केवल दो क्षेत्रों में हुआ- एक नेतृत्व में और दूसरे रचना पद्धति और काव्यभाषा में।" [3]

आर्दशवाद एवं अनुशासनबद्ध धारा के प्रतिक्रिया के रूप में स्वच्छंदतावादी तौर पर छायावादी काव्यान्दोलन का विकास हुआ, रामस्वरूप चतुर्वेदी के शब्दों में कहें तो "स्वछंदतावाद की प्रमुख विशेषताओं में है- वन का महत्त्व, प्रकृति पर्यवेक्षण, प्रेम का स्वच्छंद भंगिमाओं में चित्रण और बैलैड या कथा गीत का प्रयोग, और काव्यभाषा के रूप में खड़ी बोली की स्वीकृति। सबसे बड़ी बात यह कि इस स्वच्छंदतावादी काव्य धारा ने जीवन से लगाव की एक भूमिका तैयार की जो आगे चलकर छायावाद में और गहरी हो जाती है।" [4] इस काव्यान्दोलन की अनिवार्यता के रूप में जहाँ एक तरफ पश्चिम में उदित स्वच्छंतावाद को देखा जा सकता है वहीं दूसरी ओर भाषा, छंद, बिम्ब आदि शिल्पगत रूपों में परम्परावादी ढांचे के विखंडन को भी शामिल किया जा सकता है। इस अनिवार्यता से उपजी अवधारणा के अनुरूप इस धारा का कवि "तोड़ो तोड़ो तोड़ो कारा, निकले फिर गंगाजल धारा" कहकर परिवर्तन की चाह के रूप में स्वातन्त्र्य चेतना को प्रकट करता है, इसके लिए शक्ति की मौलिक कल्पना पर भी जोर देता है, और साथ ही 'मैंने मैं शैली अपनाई' कहकर स्वातन्त्र्य चेतना में वैयक्तिकता को प्रमुखता भी देता है। उसकी सौंदर्य चेतना इतनी उदार है कि वह मानव के साथ-साथ प्रकृति को भी इसमें शामिल करते हुए कहता है "सुन्दर हैं सुमन,विहग सुंदर, मानव तुम सबसे सुन्दरतम"। कुल मिलाकर यह काव्यान्दोलन मानव मुक्ति की प्रबल भावना से निर्मित है जिसके बारे में नामवर सिंह ने ठीक कहा है "छायावाद उस राष्ट्रीय जागरण की काव्यात्मक अभिव्यक्ति है जो एक ओर पुरानी रूढ़ियों से मुक्ति चाहता है और दूसरी ओर विदेशी पराधीनता से।" [5]

अब तक के उपरोक्त तीनों काव्यान्दोलनों में अनिवार्यता और अवधारणात्मकता को प्रवृत्तिगत विकास के रूप में ही देखा जा सकता है क्योंकि इनमें आंदोलन के प्रमुख तत्व विचारधारा की अनुपस्थिति ही रही है परंतु परंपरा के रूप में इन्हें नाकारा भी नहीं जा सकता है। वास्तविक रूप में काव्यांदोलन की शुरुआत प्रगतिवाद के रूप में देखी जा सकती है। मार्क्सवाद को केंद्र में रखने वाली इस धारा की उत्पत्ति भारत में 'प्रगतिशील लेखक संघ' के साथ मानी जाती है जो1936-43 का दौर है। इस काव्यान्दोलन की अनिवार्यता को वैश्विक स्तर पर व्याप्त मार्क्सवाद के द्वंद्वात्मक भौतिकवाद, वर्ग संघर्ष, तथा अतिरिक्त मूल्य के सिद्धांत के रूप में समझा जा सकता

है जो साहित्य को उत्पादन प्रणाली का एक उपउत्पाद मनाता है जिसका उद्देश्य शोषितों को शोषण के प्रति जागरूक बनाना है इस रूप में वह रचना के कथ्य पर ज्यादा जोर देता है शिल्प के बजाय। अवधारणा के रूप में यह काव्यान्दोलन आध्यात्मिकता के बजाय भौतिकतावाद पर अधिक जोर देता है इस रूप में यह समाजवादी यथार्थवाद पर बल देते हुए कहता है "दाने आए घर के अंदर कई दिनों के बाद, चमक उठीं घर भर की आँखे कई दिनों के बाद"। साम्यवाद को आदर्श मानते हुए इस धारा का कवि मार्क्सवाद में विश्वास रखते हुए मजदूरों एवं क्रांति करने वाली सेना के स्त्री पुरुषों को लाल सलाम कहता है, वह पूंजीवादी व्यवस्था से घृणा करते हुए उसे मरण, रिक्त और व्यर्थ कहता है और शोषितों के प्रति सहानुभूति रखते हुए उसे लोहे के रूप में निरूपित करते हुए कहता है "मैंने उसको जब जब देखा, लोहा देखा, लोहा जैसे तपते देखा, ढलते देखा"। सहज भाषा, साफगोई, और लोक धुनों और बिम्बों को आधार बनाने वाली इस धारा के बारे में रेखा अवस्थी ने उचित टिप्पणी की है "प्रगतिवाद ने रचनाकारों की सौन्दर्यवृत्ति, विचारदृष्टि और रचना सामर्थ्य को उन अवरोधों से मुक्त किया जो आध्यात्मवाद, रहस्यवाद, आदर्शवाद, कलावाद आदि के नाम पर उन्हें कुंठित कर रहे थे। नए यथार्थवादी सौंदर्य, समाजवादी विचारधारा, मानववाद और जनसंस्कृति के उपादानों से कविता को समृद्ध करने के प्रयास आरम्भ हुए।" [6]

जिस प्रकार स्थूल के प्रति सूक्ष्म के विद्रोह से छायावाद आया उसी प्रकार वैचारिक प्रतिबद्धता के विरोध में स्वानुभूति की प्रामाणिकता को केंद्र में रखकर प्रयोगवाद आया। तारसप्तक की भूमिका में अज्ञेय ने इसे जीवन सत्यों के अन्वेषण का माध्यम माना है। बच्चन सिंह के शब्दों में कहें तो "तारसप्तक की निषेधात्मक प्रवृति है छायावाद से मुक्ति पाने का प्रयास और प्रयोगों के द्वारा नए राग सत्य की अभिव्यक्ति।" [7] अवधारणा के रूप में इस धारा में भावुकता और बौद्धिकता के संश्लेषण पर जोर देते हुए कवि कहता है "सुनो कवि, भावनाएं नहीं हैं सोता, भावनाएं खाद हैं केवल"। नवीन राहों का अन्वेषण करते हुए वह प्रदत्त सत्यों को नकारते हुए टूटने के सुख को महसूस करता है, नदी के द्वीप के रूप में व्यक्ति को महत्व देता है तो "बस उतना ही क्षण अपना, तुम्हारी पलकों का कँपना" कहकर क्षण की महत्ता को भी उजागर कर देता है। प्रयोगवादी कवि शहरी है उसका प्रेम बौद्धिक है, जीवन की एक जरूरत है इसीलिए वह फूल को प्यार करने को तो कहता है लेकिन उसको झड़े तो झड़ जाने देने को भी कहता है। कथ्य के बजाय वः शिल्प पर जोर देता है और मानता है कि जितनी हमारी भाषा होती है, हम उतना ही सोच सकते हैं इसी कारण उपमान और प्रतीक उसे प्रिय हैं। प्रयोगवादी काव्य अंदोलन के निर्माण में स्वतंत्रता पूर्व के अकाल, आंदोलन, विश्वयुद्ध आदि की प्रमुख भूमिका रही है और उतना ही योगदान स्वतंत्रता पश्चात की परिस्थितियों का भी है इसी की अगली कड़ी के रूप में स्वतंत्रता प्राप्ति के आरंभिक दौर में नई कविता आंदोलन का जन्म हुआ जिसके केंद्र में भी प्रयोगवादी प्रेरणा स्रोत की तरह मनोविश्लेषणवाद, निर्वैयक्तिकता सिद्धांत, क्षणवादी मानसिकता, नई समीक्षा आंदोलन, और अस्तित्ववाद की प्रमुख भूमिका रही है। रामविलास शर्मा के शब्दों में कहें तो "हिंदी के अधिकांश नई कविता लिखने वालों का हाल रोकान्तै जैसा है। ऊब, ऊबकाई, अकेलापन, बुरे बुरे सपने, त्रास, आत्महत्या की चाह..... आदि आदि लक्षण इनमे मिलाता हैं।" [8] दरअसल इस काव्यान्दोलन के अनिवार्यता के पीछे आजादी के बाद पैदा विषमता, मशीनीकरण, शहरीकरण, यांत्रिकता, अकेलापन और आत्मनिर्वासन का भाव प्रमुख है। इससे उतपन्न अवधारणा के फलस्वरूप नया कवि लघुमानव की धारणा पर जोर देता है, वह भोगे हुए यथार्थ पर बल देते हुए कहता है कि "मैं नया कवि हूँ, इसीसे जानता हूँ, सत्य की चोट

कितनी गहरी होती है" आधुनिक भावबोध के इस कवि की संवेदना भी आधुनिक है वह महानगरीय जीवन की विषंगतियां और त्रासदियां बताते हुए कहता है कि "आदमी से ज्यादा लोग पोस्टरों को पहचानते है, वे आदमी से बड़े सत्य हैं" नामवर सिंह ने इस बदलते काव्य स्वरूप पर उचित टिप्पणी की है कि "नई कविता ने कविता के नए मूल्यों को प्रतिष्ठित करने के साथ ही कविता पढ़ने की नई पद्धति की आवश्यकता भी प्रदर्शित की है।"[9] शिल्प के तौर पर इस धारा का कवि भाषा पर अधिक बल देता है नए भाव बोध के लिए वह नए नए उपमानों का प्रयोग करता है, जगदीश गुप्त नई कविता के इस पक्ष पर टिप्पणी करते हुए कहते हैं कि "नया कवि छंद को संवारने की अपेक्षा वस्तु तत्व को व्यवस्थित करने, उसके रूप को उभारने और अनभूति के मूल ढांचे को सशक्त बनाने का विशेष प्रयत्न करता है।"[10]

नई कविता के बाद के समय को काव्यान्दोलन के तौर पर समकालीन कविता के रूप में जाना जाता है वैसे छठें दशक से लेकर वर्तमान तक को समेटने वाले इस काव्यांदोलन का निर्माण आजादी से प्राप्त मोहभंग, आपातकाल, नक्सलबाड़ी आंदोलन, तथा 90 के बाद आए उदारीकरण, वैश्वीकरण, तथा निजीकरण जैसी परिस्थितियों में हुआ है इस कारण इसके अंतर्गत कई प्रकार की प्रवृत्तियों का विकास हुआ जिससे इस काव्यान्दोलन के भीतर भी कई काव्य धाराओं का विकास हुआ जिसे अकविता, जनवादी कविता, नवगीत, आज की कविता, युयुत्सुवादी कविता आदि नामों से पुकारा गया वास्तविक रूप में समकालीन कविता इन्हीं का ही समुच्चय है, जिसमें अकविता का कवि अवधारणा के रूप में अवांगार्द तथा एंटी पोएट्री आंदोलन से प्रभावित होकर सभी विचार और आदर्शों का विध्वंस करता हुआ कहता है कि "पर जब सभी कुछ, ऊल ही जुलूल है, सोचना फिजूल है"। वह मानवीय सम्बन्धों के प्रति अनास्था को प्रकट करते हुए प्रेम को रोग कहता है और उसे भट्टी में झोंक देने का आपेक्षी है। वहीं जनवादी कवि में संसदीय लोकतंत्र के प्रति तीव्र आक्रोश है वह संसद को आधे तेल और आधे पानी मिश्रित तेली की घानी घोषित करता है। वह आमूलचूल परिवर्तन के लिए हंगामे के बजाय सूरत बदलने वाली कोशिश पर भी जोर देने की बात करता है, साथ ही नवगीत के रूप में वह क्रांतिकारी मानसिकता को प्रदर्शित करते हुए लोहे की छड़ों में बंद युग के सवेरे के मुक्ति की बात भी करता है और उसके साथ-साथ भीड़तंत्र में तब्दील होती जा रही लोकतान्त्रिक व्यवस्था के प्रति भी असन्तोष का भाव प्रकट करता है। रामविलास शर्मा के शब्दों में कहें तो "यह मूल्यों के विघटन का युग है। हर चीज टूट रही है, कवि टूट रहा है, कविता टूट रही है। फासिस्ट तानाशाही के पनपने के लिए वह हवा बहुत मुफीद होती है जिसमें मनुष्य के लिए हत्या और आत्महत्या में ज्यादा फर्क न रहे।"[11] वहीं आठवें और नवें दशक की कविता में कवि उत्तराधुनिकता से पैदा उपभोक्तावादी संस्कृति, अस्मितापरक मूल्यों, और नव उदारीकरण के तत्वों की गहनता से निरन्तर पड़ताल कर रहा है। मदन कश्यप के शब्दों में कहें तो "नए कवियों के पाथेय की चर्चा तो पिछले प्रश्न में ही विस्तार से कर चुका हूँ। मैं उसमें साम्राज्यवाद, साम्प्रदायिकता, और उदारीकरण से पैदा हुई बाजार की तानाशाही के विरोध को भी शामिल करना चाहूंगा।"[12]

इस प्रकार विभिन्न काव्यान्दोलनों की अनिवार्यता और अवधारणात्मकता को समझा जा सकता है और यह भी कहा जा सकता है कि साहित्य की विधाओं और समाज के आंदोलनों के बीच एक अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है जो एक दूसरे के स्वरूप निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते रहे हैं ।

सन्दर्भ परिचय

1. पृ.स.- 416, हिंदी साहित्य का इतिहास, डॉ. नगेन्द्र
2. पृ.स.- 65, भारतेंदु हरिश्चन्द्र और हिंदी नवजागरण की समस्याएं,रामविलास शर्मा
3. पृ.स.- 40, हिंदी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास, गणपति चंद्र गुप्त
4. पृ.स.- 94, हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी
5. पृ.स.- 17, छायावाद, नामवर सिंह
6. पृ.स.- 114, प्रगतिवाद और समानांतर साहित्य, रेखा अवस्थी
7. पृ.स.- 258, आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास, बच्चन सिंह
8. पृ.स.- 115, नयी कविता और अस्तित्ववाद, रामविलास शर्मा
9. पृ.स.- 35, कविता के नए प्रतिमान, नामवर सिंह
10. पृ.स.- 23, नई कविता सैद्धांतिक पक्ष, जगदीश गुप्त
11. पृ.स.- 120, नयी कविता और अस्तित्ववाद, रामविलास शर्मा
12. पृ.स.- 20, हिंदी कविता 80 के बाद (वागर्थ), सं.- एकांत श्रीवास्तव

13. डॉ. नगेन्द्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, मयूर पेपरबैक्स, पैंतीसवां पुनर्मुद्रण, 2009.
14. रामविलास शर्मा, भारतेंदु हरिश्चंद्र और हिंदी नवजागरण की समस्याएं, राजकमल प्रकाशन, पहली आवृत्ति, 2014.
15. गणपति चंद्र गुप्त, हिंदी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास, लोकभारती प्रकाशन, बारहवां संस्करण, 2010.
16. रामस्वरूप चतुर्वेदी, हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, लोकभारती प्रकाशन, तेइसवां संस्करण, 2010.
17. नामवर सिंह, छायावाद, राजकमल प्रकाशन, ग्यारहवीं आवृति, 2011.
18. रेखा अवस्थी, प्रगतिवाद और समानांतर साहित्य, राजकमल प्रकाशन, पहला संस्करण, 2012.
19. बच्चन सिंह, आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास, लोकभारती प्रकाशन, संशोधित संस्करण, 2005.
20. रामविलास शर्मा, नयी कविता और अस्तित्ववाद, राजकमल प्रकाशन, आवृति, 2010.
21. नामवर सिंह, कविता के नए प्रतिमान, राजकमल प्रकाशन, नौवीं आवृति, 2010.
22. जगदीश गुप्त, नयी कविता सैद्धांतिक पक्ष, लोकभारती प्रकाशन, द्वितीय संस्करण, 2010.
23. एकांत श्रीवास्तव और कुसुम खेमानी (सं.), वागर्थ (अंक-209) (हिंदी कविता: 80 के बाद), भारतीय भाषा परिषद, दिसम्बर 2012.